बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

प्राचीन विदेशी यात्रियों व लेखकों द्वारा वर्णित लेखन सामग्री : भारतीय परिप्रेक्ष्य में

डॉ. दिवाकर मिश्र

प्राचीन भारत के इतिहास व संस्कृति को जानने हेतु विदेशी यात्रियों व लेखकों के विवरणों की गणना महत्वपूर्ण स्रोतों में होती है। ऐसे लेखकों में यूनानी, चीनी, तथा अरबी लेखक प्रमुख हैं। इनमें से कुछ लेखकों ने जनश्रुतियों एवं भारतीय ग्रन्थों को अपने विवरण का आधार बनाया जबकि, कुछ ने राजदूत या तीर्थयात्री के रुप में भारत की यात्रा की, यहाँ के स्थानों का भ्रमण किया तथा अपने अनुभव के आधार पर भारत विषयक विवरण लिखा। भारतीय परिस्थितियों व भाषा से अपरिचित होते हुए भी इन लेखकों ने जो विवरण तैयार किया उससे भारत के राजनैतिक सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि विविध पक्षों पर प्रकाश पड़ता हैं। साथ ही भारतीय लेखन प्रणाली व तत्कालीन समय में यहाँ प्रचलित लेखन सामग्रियों के उल्लेख भी इनके विवरणों में यत्र–तत्र प्राप्त होते हैं। भारत में प्रस्तर, ताम्रपत्र भूर्जपत्र, ताड़पत्र, वस्त्र, काष्ठ–फलक आदि विविध प्रकार के लेखन सामग्रियों का प्रयोग किया जाता था, जिनका वर्णन विदेशी यात्रियों व लेखकों द्वारा अपने विवरण में भी किया गया है। इनके विवरणों में उल्लेखित लेखन आधार इस प्रकार देखे जा सकते हैं–

प्रस्तर–

स्थायी लेखन के लिए प्रयुक्त होने वाला यह सबसे प्राचीन, सर्वसुलभ व लोकप्रिय लेखन आधार था। भारत में प्रस्तर पर नियमित रुप से अभिलेख उत्कीर्ण कराने की शुरूआत मौर्य सम्राट अशोक ने की थी। उसने शिलाओं, प्रस्तर स्तम्भों आदि पर अपने लेख उत्कीर्ण करवाये थे। चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में भारत आए यूनानी राजदूत मेगस्थनीज के विवरण से संकेत मिलता है कि अशोक के पूर्व ही प्रस्तर का प्रयोग लेखन आधार के रुप में किया जाता था। उसने इण्डिका में लिखा है कि भारत में सड़को पर मार्ग व दूरी बताने के लिए प्रत्येक दस स्टेडिया पर प्रस्तर के स्तम्भ लगाये जाते थे।[i] सम्भवतः इन स्तम्भों पर यात्रियों की सहायता के लिए सूचनास्वरुप मार्गों का नाम व दूरी आदि लिखा जाते रहे होंगे।

पाँचवीं शताब्दी ईस्वी में भारत आए चीनी यात्री फाह्यान ने अपने यात्रा विवरण में कई प्रस्तर स्तम्भों पर लेख उत्कीर्ण होने की सूचना दी है। वह कुशीनगर का वर्णन करते हुए बतलाता है कि यहाँ एक प्रस्तर स्तम्भ पर बुद्ध के परिनिर्वाण की कथा लिखी हुई है।[ii] हालांकि इस स्थान व इस स्तम्भ का आज तक पता नही चल पाया है। इसी प्रकार अपनी यात्रा के दौरान पाटलिपुत्र पहुँचने पर उसने एक अन्य अभिलिखित प्रस्तर स्तम्भ देखा, जो अशोक द्वारा बनवाए गये स्तूप के दक्षिण में स्थित था। उस पर यह वाक्य उत्कीर्ण था–अशोक राजा ने जंबूद्वीप के चारों ओर से भिक्षु संघ को दान कर दिया फिर धन देकर ले लिया। यह तीन बार किया।[iii] आगे वह लिखता है कि अशोक ने स्तूप के उत्तर में नेले नगर बसाया। इस नगर में भी एक प्रस्तर स्तम्भ है, जिस पर नगर बसने का वर्ष, तिथि, और मास उत्कीर्ण है।[iv] फाह्यान द्वारा उल्लेखित नेले शहर की भी अब तक पहचान नही हो सकी है।

सातवीं शताब्दी ईस्वी में भारत आए चीनी यात्री ह्वेनसांग भी अपने यात्रा विवरण 'सी–यू–की' में अशोक द्वारा भिक्षुसंघ को तीन बार जंबूद्वीप दान दिये जाने व उसे तीनो बार खरीद लेने सम्बन्धी लेख स्तम्भ पर उत्कीर्ण होने की पुष्टि करता है।[v] गाजीपुर (उत्तर प्रदेश) के आस–पास एक अन्य अभिलिखित प्रस्तर स्तम्भ के बारे में भी वह सूचना देता है। उसके अनुसार इस स्तम्भ पर राक्षसों को पराजित करने का वृतान्त उत्कीर्ण है।[vi] बहुत सम्भव है फाह्यान व ह्वेनसांग दोनो जिस स्तम्भ के बारे में सूचना देते हैं, उस पर अशोक के धर्माभिलेख ही उत्कीर्ण रहें हो तथा उन्होने जिसे अपने अनुसार व्याख्यायित किया। इस प्रकार इनके विवरणों से प्राचीन भारत में प्रस्तर विशेषतः स्तम्भों पर लेख उत्कीर्णन की परम्परा का ज्ञान अवश्य होता है।

भूर्जपत्र–

भूर्जपत्र भारत विशेषतः उत्तरी भारत में एक प्रमुख व लोकप्रिय लेखन आधार था। इसकी पवित्रता के कारण इसका प्रयोग हस्तलिखित ग्रन्थ, पंचाग, भविष्यफल, तन्त्र–मन्त्र, आदि के लिए किया ही जाता था। ग्रीक लेखक क्विण्टस कर्टियस ने लेखन आधार के रुप में भारत में इसका प्रचलन सिकन्दर के समय से ही बतलाया है। वह लिखता है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय भारत के लोग लिखने के लिए कागज के समान वृक्षों की छाल के आन्तरिक कोमल भाग का प्रयोग करते थे।[vii] इस विवरण से स्पष्टतः पता चलता है कि तत्कालीन समय में भारत में लिखने के लिए भूर्जपत्रों का प्रचलन था। भारतीय जलवायु की प्रतिकूलता के कारण प्राचीन भूर्जपत्रों पर लिखित पाण्डुलिपियाँ वर्तमान समय तक सुरक्षित नही रह पायीं किन्तु संस्कृत साहित्य में भूर्जपत्र का उल्लेख प्रचुरता से मिलता है, जो इसकी लोकप्रियता का सूचक है।

तुर्क आक्रमणकारी महमूद गजनवी के साथ भारत आए अरबी यात्री अलबरुनी ने भूजपत्रों का लेखन सामग्री के रुप में न केवल उल्लेख किया है, बल्कि उस पर लिखने की प्रक्रिया की भी विस्तृत जानकारी दी है। वह लिखता है कि मध्य व उत्तरी भारत में लोग **'तूज'** वृक्ष की छाल का प्रयोग करते हैं, जिसका एक प्रकार धनुषों पर आवरण चढ़ाने के काम आता है। इसे भूर्ज कहा जाता है। वे एक गज लम्बा और अंगुलिपर्यन्त एक हाथ चौड़ा अथवा कुछ कम का टुकडा लेते हैं और अनेक ढ़गों से तैयार करते

हैं। वे उसे तेल से चिकना व चमकदार बनाते हैं, जिससे वह सख्त और चिकना हो जाए। तब वे उस पर लिखते हैं। उचित क्रम संख्या द्वारा प्रत्येक पत्र पर निशान लगाया जाता है। पूरी पुस्तक कपड़े के एक टुकडे में लपेट दी जाती है और उसी आकार की लकड़ी की दो पट्टियों से बाँध दिया जाता है। इस प्रकार की पुस्तक को 'पुथी' कहा जाता है। अपने पत्र और उन्हें जो कुछ भी लिखना होता है, वे तुज वृक्ष की छाल पर लिखते थे।[viii]

ताम्रपत्र–

ताम्रपत्र धातुओं मे सबसे लोकप्रिय लेखन आधार था। इस लेखन आधार के विषय में जानकारी देते हुए चीनी यात्री फाह्यान लिखता है कि बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात विभिन्न देशों के राजा व व्यापारियों के प्रधानों ने भिक्षुओं के लिए विहार बनवाए तथा खेत, घर, वन, बगीचे आदि वहाँ की प्रजा व पशुओं को दान में दे दिए। इन दान के विवरण को धातुपत्रों पर उत्कीर्ण करा कर उन्हें दिया गया जिससे वे अभी तक सुरक्षित हैं तथा किसी ने उसे रद्द करने का साहस नही किया।[ix] एक अन्य स्थान पर भी वह बतलाता है कि बौद्धधर्मावलम्बी एक राजा ने संघ को वहाँ की बस्ती, खेत, घर धातुपत्र पर लिखवाकर दान में दिया।[x]

उपरोक्त विवरण में फाह्यान ने जिस धातुपत्र का उल्लेख किया है वह धातु निसंदेह ताम्र ही रही होगी क्योंकि प्राचीन भारत में दानादि का विवरण सामान्यतः ताम्रपत्रों पर ही उत्कीर्ण कराने की परम्परा थी जो कालान्तर में भी प्रचलित रही। पुरातात्विक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि लेखन के लिए ताम्रपत्रों का प्रयोग प्रथम शताब्दी ईस्वी से ही होने लगा था। तक्षशिला ताम्रपत्र,[xi] कलवन[xii] तथा सुई विहार[xiii] से प्राप्त ताम्रपत्र शक–कुषाण युग से सम्बन्धित हैं। सातवीं शताब्दी ईस्वी में भारत आए चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरण से भी कुषाण काल में लेखन के लिए ताम्रपत्रों का प्रचलन प्रमाणित होता है। उसके अनुसार कनिष्क ने त्रिपिटकों के भाष्य को तीस हजार श्लोकों में संकलित कराकर ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण करवाया तथा प्रस्तर के सन्दूक में बन्द कर उन पर स्तूप बनवा दिया था।[xiv] दुर्भाग्य से अभी तक ऐसे ताम्रपत्र प्राप्त नही हो सके हैं किन्तु अन्य साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि भारत में ताम्रपत्रों पर दानादि के विवरण के अतिरिक्त धार्मिक ग्रन्थ आदि भी लिखे जाते थे। जैन ग्रन्थ वासुदेवहिंडि में ताम्रपत्रों पर पुस्तक लिखवाये जाने का उल्लेख मिलता है।[xv] उ.प्र. के गोरखपुर जिले में कसिया नामक स्थान से प्राप्त लगभग पाँचवी शताब्दी ईस्वी के एक ताम्र–पत्र पर संस्कृत भाषा में निदानसूत्र उत्कीर्ण किया गया है जो विभिन्न बौद्ध ग्रन्थों में पाया जाता है।[xvi] सातवीं शताब्दी ईस्वी का एक अन्य ताम्रपत्र मध्य प्रदेश के सिरपुर नामक स्थान से प्राप्त हुआ है, जिस पर भी बौद्व सूत्रों को उत्कीर्ण किया गया था।[xvii]

ताड़पत्र–

लेखन आधार के रुप में ताड़पत्रों का प्रचलन भारत विशेषकर दक्षिण भारत में बहुत पहले से था। गौरीशंकर हीराचन्द ओझा[xviii] के अनुसार जातकों में पण्ण (पत्र, पत्ता) का उल्लेख कई जगह मिलता है, जो ताड़पत्र का ही सूचक होना चाहिए। प्लिनी के नेचुरल हिस्ट्री से ज्ञात होता है कि कागज से पूर्व लिखने के लिए ताड़पत्रों का ही प्रयोग किया जाता था तत्पश्चात भूर्जपत्र प्रचलन में आया।[xix] चीनी यात्री हवेनसांग ने कोंकणपुर नगर का वर्णन करते हुए लिखा है कि नगर के उत्तर में थोड़ी दूर पर लगभग 30ली की क्षेत्रफल में तालवृक्षों का वन है। इस वृक्ष के पत्ते लम्बे चौड़े और रंग में चमकीले हैं। ये भारत के सब देशों में लिखने के काम आते है।[xx] यह तथ्य तत्कालीन भारत में लेखन सामग्री के रुप में ताड़पत्रों की लोकप्रयता का सूचक है। हवेनसांग के जीवन चरित से ज्ञात होता है कि जब प्रथम बौद्ध संगिति हुई थी, उसमें त्रिपिटकों को ताड़पत्रों पर ही लिखा गया।[xxi] अलबरुनी इस विषय में विस्तृत जानकारी देते हुए लिखता है कि हिन्दुओं के दक्षिण देश में खजूर व नारियल का जैसा पतला वृक्ष होता था। इसका फल खाया जाता है। इसकी पत्तियां एक गज लम्बी तथा दोनों ओर तीन अंगुल के लगभग चौड़ी रहती थीं। वे इन पत्तों को तारी कहते हैं और उस पर लिखते हैं। वे इन पत्तों को एक धागे से इक्कठा बाँध कर पुस्तक बना लेते हैं। प्रत्येक पत्ते के मध्य में एक छिद्र होता है। उस छिद्र में से वे सब पत्तों को पिरो लेते हैं।[xxii] भारत से प्राप्त होने वाली ताड़पत्रों की पाण्डुलिपियों से अलबरुनी के कथन की अक्षरशः पुष्टि होती है।

कागज–

लिखने के लिए कागज का प्रचलन प्राचीन भारत में न के बराबर था, जिसका प्रमुख कारण कागज की अपेक्षा ताड़पत्र और भूर्जपत्र अधिक मात्रा में सुलभता थी दूसरे उसका स्तर भी अच्छा नही होता था और स्याही फैलती थी।[xxiii] प्लिनी ने नेचुरल हिस्ट्री में कागज के विषय में कहा है कि कागज का निर्माण पेपीरस नामक वृक्ष से किया जाता था तथा मिस्र में इसकी खोज उस समय हुई, जब विजय के पश्चात सिकन्दर के द्वारा वहाँ अलेक्जेन्ड्रिया की स्थापना की गयी।[xxiv] कागज के उद्भव के सन्दर्भ में अलबरुनी बतलाता है कि कागज सबसे पहले चीन में बना था। चीनी कैदियों ने समरकंद में कागज बनाने की शुरुआत की और वहीं से कागज निर्माण की कला अन्य देशों फैली।[xxv] इस आधार पर प्रारम्भ में यह माना जाता था कि कागज का अविष्कार सबसे पहले चीन में हुआ तथा भारत में यह मुसलमानों द्वारा प्रचलित किया गया। सातवीं शती का चीनी यात्री इत्सिंग[xxvi] अपने यात्रा विवरण में लिखता है कि संस्कृत की पाण्डुलिपियां लिखने के लिए चीन से स्याही के टुकड़े व कागज मंगाया गया।

इत्सिंग के विवरण को आधार बनाकर पी. के. गोडे[xxvii] ने मत प्रस्तुत किया कि भारतीयों को चीनी यात्रियों के माध्यम से कागज का पता चला होगा। डी.सी. सरकार[xxviii] भी इसी मत के सर्मथक हैं। किन्तु इस विवरण से यह सिद्ध नही होता कि भारत के लोगों को कागज का ज्ञान नही था। किसी वस्तु की मांग करना उसके विषय में अज्ञानता का परिचायक नही हो सकता। स्वंय इत्सिंग ने एक स्थान पर लिखा है कि भारत में भिक्षु और साधारण लोग रेशम या कागज पर बुद्ध की प्रतिमा छापते थे।[xxix] इससे लगता है कि भारत में कागज अवश्य रहा होगा। अलबरुनी भी हिन्दूओं के विचित्र रीति–रिवाजों की उल्लेख करते समय कहता है कि यहाँ के लेखक काले रंग के कागज का उपयोग करते हैं, उनकी लेखनी इस पर सफेद रंग से लिखती है।[xxx] यह कागज सम्भवतः भारत में निर्मित कागज रहा होगा जो अच्छी किस्म का नही होगा। वररुचि कृत पत्रमंजरी जो सामान्यतः गुप्तकालीन रचना मानी जाती है, में भी कागज पर पत्र लिखने का उल्लेख मिलता है।[xxxi] इससे भी स्पष्ट होता है कि भारत में कागज का प्रचलन कम ही सही लेकिन प्राचीन काल से होता था।

काष्ठ फलक–

अलबरुनी ने भारतीय पाठशालाओं में बालकों द्वारा लिखने के लिए काली तख्तियों का प्रयोग किए जाने का उल्लेख किया है, जिस वे किसी सफेद वस्तु से लिखते थे।[xxxii] सम्भवतः वह वस्तु खड़िया रही होगी। प्राथमिक पाठशालाओं में शिशुओं द्वारा लकड़ी के फलक का उल्लेख जातक कथाओं में भी हुआ है,[xxxiii] जो इस परम्परा के बहुत पहले से प्रारम्भ होने का प्रमाण है। इसी प्रकार ललित विस्तर में गौतम बुद्ध द्वारा पाठशाला में चन्दन की लकड़ी व सोने की लेखनी प्रयोग किये उल्लेख मिलता है।[xxxiv] कात्यायन व दण्डी ने भी पाण्डुलेख द्वारा काष्ठ फलक पर अभियोग व राजकीय शासन लिखे जाने का उल्लेख किया है।[xxxv] राजशेखर के काव्यमीमांसा[xxxvi] दण्डि कृत दशकुमारचरित[xxxvii], हर्ष कृत नैषधीयचरितम[xxxviii] से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समय में लिखने के लिए काष्ठ फलकों का प्रयोग किया जाता था।

कला सन्दर्भों में भी लेखन के लिए फलक के प्रयोग किये जाने के उदाहरण मिलते हैं। गांधार कला शैली में निर्मित एक पट्टिका में पाठशाला जाते समय गौतम बुद्ध को भी अपने सहपाठियों सहित ऐसे ही आयताकार फलक व अन्य लेखन सामग्री लिए प्रदर्शित किया गया है।[xxxix] पेशावर संग्रहालय[xl] में संग्रहीत एक खण्डित पट्टिका में गौतम बुद्ध को अपने घुटने पर फलक रख कर लिखते हुए दिखलाया गया है। इस फलक पर खरोष्ठी के कुछ अक्षरों का अंकन भी है। हरियाणा में अंबाला जिले के सुघ नामक स्थान से कुछ वर्षों पूर्व मिट्टी का बना हुआ शुंगकालीन एक खिलौना प्राप्त हुआ था। इसमें बैठे हुए एक बालक को लिखने का फलक लिए हुए प्रदर्शित किया गया है जिस पर ब्राह्मी लिपि में द्वादशाक्षरी वर्णों का अंकन है।[xli]

भारत में काष्ठ–फलक पर लिखने का प्राचीनतम पुरातात्त्विक साक्ष्य सैन्धव–सरस्वती सभ्यता से प्राप्त होता है। 1991 में गुजरात में धौलावीरा[xlii] नामक पुरास्थल से एक में साईन बोर्ड या नाम पट्टिका के अवशेष मिले हैं। यह वस्तुतः लकडी के फलक पर जिप्सम से लिखा हुआ पट्ट था, जिसमें 10 अक्षर है। मध्य एशिया के निया नामक स्थान से चर्मपत्र, रेशम के टुकड़े व कागज की पाण्डुलिपियों के साथ ऑरेल स्टाइन[xliii] ने लगभग तृतीय शताब्दी ईस्वी के ऐसे बहुसंख्यक काष्ठ–फलक खोजे थे, जिन पर खरोष्ठी लिपि में लेख अंकित किए गये हैं।

वस्त्र या पट्ट–

प्राचीन काल में वस्त्रों को भी लेखन आधार के रुप में प्रयोग में लाया गया, जिन्हें संस्कृत में पट या कार्पासिक पट कहा जाता था। यूनानी लेखक निर्याकस लिखता है कि भारत के लोग लिखने के लिए कपड़े का प्रयोग करते थे, जिसे अच्छे तरीके से कुटकर चिकना बनाया जाता था। साथ ही वह यह भी कहता है कि अन्य लेखकों ने पुष्ट किया है कि भारतीयों को लिखने का ज्ञान नही था।[xliv] हालांकि गौरीशंकर हीराचन्द ओझा[xlv] व राजबली पाण्डेय[xlvi] ने निर्याकस के इस विवरण में उल्लेखित कपड़े को कागज मानते हैं। हुई–ली द्वारा रचित लाइफ आवॅ हवेनसांग[xlvii] में उल्लेख मिलता है कि हर्ष ने बढ़िया सफेद कपड़े पर कुछ अक्षर लिखवाकर उसे लाल चर्म से मुहरबन्द किया। वह पत्र चीनी यात्रियों के आधिकारिक महतर को प्रदान किया ताकि वे जिस देश में हो कर जाएंगे, वहाँ के अधिकारियों को उक्त राजाज्ञा दिखा सकें। हर्ष के काल में वस्त्र पर लेख अंकित किए जाने का प्रमाण बाणभट्ट के ग्रन्थों में भी प्राप्त होती है। जहाँ हर्षचरित[xlviii] में एक व्यक्ति द्वारा हर्ष के पास एक लेख लाये जाने का उल्लेख है, जो कि उसकी नीली पगडी पर लिखा था वहीं कादम्बरी[xlix] में चण्डिका देवी के मन्दिर के तमिल देशवासी पुजारी के वर्णन में वस्त्र पर लिखित दुर्गा स्रोत का उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार अलबरुनी[l] लिखता है कि उसे जानकारी मिली थी काबुल के शाहियावंशी शासकों की वंशावली रेशमी वस्त्र पर लिखी हुई है तथा नगरकोट के किले में विद्यमान है। उसकी इच्छा थी कि वह उसे देखे लेकिन कई कारणों से वह उसे देख नही सका।

जॉर्ज ब्यूलर[li] को भी एक स्याही से लिखित रेशम का टुकड़ा जैसलमेर के पुस्तकालय में प्राप्त हुआ था। इसी प्रकार वस्त्रों पर लिखित एक मात्र ग्रन्थ गुजरात में पाटण[lii] के जैन पुस्तक भण्डार से प्राप्त हुआ है।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत में प्रचलित विभिन्न प्रकार की लेखन सामग्रियों उल्लेख विदेशी यात्रियों

व लेखकों ने अपने विवरण में किया है। इनके भारत आने तथा भारत के विषय में लिखने का उद्देश्य जो भी रहा हो, तत्कालीन भारत में प्रचलित लेखन सामग्री के सन्दर्भ में इन्होंने जो कुछ भी देखा व सुना उसे अपने विवरणों में अक्षरशः लिखा। इन सभी विदेशी यात्रियों व लेखकों के विवरण से ना केवल तत्कालीन लेखन सामग्री पर प्रकाश पड़ता है बल्कि विविध उद्देश्यों के लिए अलग–अलग लेखन सामग्री के प्रचलन की पुष्टि होती है। साथ ही लेखन सामग्री से सम्बन्धित उन सभी तथ्यों पर निश्चितता की मुहर लगती है, जिसकी सूचना हमें अन्य स्रोतों से प्राप्त होती है।

सन्दर्भ सूची–

1. मैक्रिन्डल, जे. डब्ल्यू., एन्शिएन्ट इण्डिया ऐज डिस्क्राइब बाइ मेगास्थनीज एण्ड एरियन, लंदन, 1877, पृ. 95।
2. जेम्स लीज, ए रिकार्ड आवॅ बुद्धिस्ट किंगडमस्, क्लेरेण्डन प्रेस, 1886, पृ. 72।
3. उपरोक्त, पृ. 80।
4. उपरोक्त।
5. वर्मा, टी. पी. (अनुवादक), ह्वेनसांग की भारत यात्रा, आर्दश हिन्दी पुस्तकालय, इलाहाबाद, 1972, पृ. 250।
6. वर्मा, टी. पी., पूर्वोक्त, पृ. 227।
7. मैक्रिन्डल, जे. डब्ल्यू., दि इन्वेसन ऑव इण्डिया बाइ एलेक्जेन्डर दि ग्रेट, कोस्मो प्रकाशन, दिल्ली, 1987, पृ.
8. 186।
9. एडवर्ड सी. सचाउ, अलबेरुनीज इण्डिया, भाग–1, एस. चन्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली, 1964, पृ. 171।
10. जेम्स लीज, ए रिकार्ड आवॅ बुद्धिस्ट किंगडमस्, क्लेरेण्डन प्रेस, 1886, पृ. 43।
11. उपरोक्त, पृ. 109।
12. कोनो, एस. (संपा.), *खरोष्ठी इंस्क्रिप्शन विद् द एक्शेप्सन ऑफ दोज ऑव अशोक, कार्पस इंस्क्रिप्शनम्*
13. *इण्डिकेरम्* जिल्द-II. भाग-I, केन्द्रीय प्रकाशन, कलकत्ता, 1929, पृ. 23।
14. गोयल श्रीराम, प्राचीन भारतीय अभिलेख संग्रह, खण्ड–1, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1982, पृ.
15. 211।
16. उपरोक्त, पृ. 243।
17. वर्मा, टी. पी., पूर्वोक्त, पृ. 110।
18. सत्येन्द्र, पाण्डुलिपि विज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2013, पृ. 157।
19. एनुअल रिर्पोट ऑव आर्कियॉलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 191.–1911, पृ. 73।
20. घोष, ए. (सम्पा.), इण्डियन आर्कियॉलाजी–ए रिव्यू, 1964–65, आर्कियॉलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, नई
21. दिल्ली, 1993, पृ. 26।
22. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, प्राचीन भारतीय लिपिमाला, मुंशीराम मनोहरलाल प्रकाशन, दिल्ली, 1993, पृ. 142।
23. रैकहम, आर. (अनु.), प्लिनी नेचुरल हिस्ट्री, खण्ड–4, हार्वर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 196., पृ., 141।
24. वर्मा टी. पी., पूर्वोक्त, पृ. 387।
25. बील, सैम्युल, द लाइफ ऑव हवेनसांग, लंदन, 1914, पृ. 117।
26. शर्मा, रजनीकान्त, अलबरुनी का भारत, आर्दश हिन्दी पुस्तकालय, इलाहाबाद, 1967, पृ. 132।

27. ए.के. नारायण एवं टी.पी. वर्मा, प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र और अभिलेखिकी, सिद्धार्थ प्रकाशन, वाराणसी,
28. 1971, पृ. 88।
29. रैकहम, आर., पूर्वोक्त, पृ., 139।
30. शर्मा, रजनीकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 132।
31. देखें भूमिका, सन्तराम, इत्सिंग की भारत यात्रा, इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, 1925 पृ. 27।
32. सरकार डी. सी., इण्डियन इपिग्राफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1965, पृ. 67।
33. उपरोक्त।
34. सन्तराम, पूर्वोक्त, पृ. 232।
35. शर्मा, रजनीकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 139।
36. पाण्डेय, राजबली, भारतीय पुरालिपि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 89।
37. रजनीकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 139।
38. सरकार, डी. सी., इण्डियन इपिग्राफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1965, पृ. 69।
39. वैद्य, पी. एल., ललितविस्तर, मिथिला विद्यापीठ, बिहार, 1958, पृ. 88।
40. सत्येन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 173।
41. काव्य मीमांसा, 4/197।
42. दशकुमारचरित, 2/66।
43. नैषधीयचरितम्, 19/62।
44. मार्शल, जॉन, दि बुद्धिस्ट आर्ट ऑव गांधार : दि स्टोरी ऑव दि अर्ली स्कूल, इट्स बर्थ, ग्रोथ एण्ड डिक्लाइन, पृ. 75 व फलक 95।
45. कोनो, स्टेन, पूर्वोक्त, खरोष्ठी इन्सक्रिप्शन्स विद् दि एक्सेप्शन्स ऑव दोज ऑव अशोक, *कार्पस इन्सक्रिप्शनम इण्डिकेरम्,* जिल्द–2, कलकत्ता, 1929 पृ. 129।
46. मूले, गुणाकर, अक्षर कथा, प्रकाशन विभाग, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, दिल्ली, 2003 पृ. 256।
47. विष्ट, आर. एन., एक्सक्वेशन्स ऐट धौलावीरा 1989–90 टू 2004–05, पृ. 228।
48. अग्रवाल आर. सी., सम फैमिली लैटर्स इन खरोष्ठी स्क्रिप्ट फ्रॉम सेन्ट्रल एशिया, इण्डियन हिस्टोरिकल क्वाटर्ली,
49. जि.–30, पृ. 50।
50. मैक्रिन्डल, जे. डब्ल्यू., दि इन्वेसन ऑव इण्डिया बाइ एलेक्जेन्डर दि ग्रेट, कोस्मो प्रकाशन, दिल्ली, 1987,
51. पृ. 186।
52. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, पूर्वोक्त, पृ. 144।
53. पाण्डेय, राजबली, पूर्वोक्त, पृ. 64।
54. बील, सैम्युल, पूर्वोक्त, पृ. 189–9.।

55. अग्रवाल, वी. एस., हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, 1964, पृ. 89।
56. अग्रवाल, वी. एस., कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 1965, पृ. 229।
57. स शर्मा, रजनीकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 301।
58. सप ब्यूलर, जॉर्ज, इण्डियन पैलियोग्राफी, इण्डियन स्टडीज :पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, कलकता, 1959, पृ. 191।
59. सपप ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, पूर्वोक्त, पृ. 146।